

[2012] 11 एस.सी.आर 50

बिहार राज्य सरकार माध्यमिक विद्यालय शिक्षक संघ

बनाम

बिहार शिक्षा सेवा संगठन एवं अन्य

(2012 का दीवानी अपील सं. 8226-8227)

23 नवंबर, 2012

[सुरिंदर सिंह निज्जर और एच. एल. गोखले, न्यायमूर्तिगण]

सेवा कानून:

बिहार माध्यमिक विद्यालय शिक्षक अधीनस्थ शिक्षा सेवा - बिहार में उन्नयन एवं विलय शिक्षा सेवा - अधिसूचना दिनांक 11.4.1977 और राज्य सरकार का संकल्प दिनांक 7.7.2006 - अभिनिर्धारित: संवर्गों के विलय का निर्णय नीतिगत है - यह राज्य को तय करना है कि किन संवर्गों का विलय किया जाए, बशर्ते कि निर्णय मनमाना या अनुचित न हो - संकल्प दिनांक 7.7.2006 तर्कसंगत और न्यायोचित है और इसे संधारित रखा जाता है - संविधान का अनुच्छेद 14 के तहत इसे मनमाना या अनुचित नहीं कहा जा सकता। - दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 8679/2002 में एकल न्यायाधीश के निर्णय और उच्च न्यायालय की खंडपीठ के आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया जाता है - परिणामस्वरूप, एकल न्यायाधीश के निर्णय के अनुसरण में जारी दिनांक 19.11.2007 की अधिसूचना भी अभिखंडित मानी जाएगी - भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 14 - प्रशासनिक कानून - नीतिगत निर्णय।

भारत का संविधान, 1950:

अनुच्छेद 141 - सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सभी न्यायालयों पर बाध्यकारी घोषित कानून - अभिनिर्धारित: उच्च न्यायालय अनुच्छेद 141 की अनदेखी नहीं कर सकते - जब किसी न्यायालय के निर्णय की उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की जाती है, न्यायिक अनुशासन के अनुसार न्यायालय को उक्त निर्णय को स्वीकार करना आवश्यक है, और उसे संपार्थिक कार्यवाही में पुष्टि किए गए निर्णय के विपरीत निर्णय नहीं लिखना चाहिए - जिस तरह से एकल न्यायाधीश विनिर्दिष्ट आदेश याचिका संख्या 10091/2006 के साथ पूरे विवाद को फिर से खोलने के लिए आगे बढ़े, और साथ ही लेटर्स पेटेंट अपील में खंडपीठ ने उस दृष्टिकोण को मंजूरी दी, वह बिल्कुल भी संतोषजनक नहीं है - यदि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश राज्य सरकार या किसी भी पक्ष को स्पष्ट नहीं थे, तो वह स्पष्टीकरण के लिए न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकता था - लेकिन वह संपार्थिक कार्यवाही में विपरीत तर्क नहीं दे सकता था - ऐसा दृष्टिकोण राज्य सरकार और साथ ही उच्च न्यायालय से भी अपेक्षित नहीं था - न्यायिक अनुशासन - पूर्व न्याय।

शिक्षा:

माध्यमिक विद्यालय शिक्षक - उन्नयन - लागू नहीं - अभिनिर्धारित: शिक्षकों के साथ सम्मानजनक व्यवहार किया जाना चाहिए और उन्हें उचित वेतन और पदोन्नति के अवसर दिए जाने चाहिए - राज्य सरकार से यह अपेक्षित नहीं है कि वह उन्हें न्यायालय में घसीटे, वर्षों तक मुकदमे में - न्यायालय राज्य सरकार द्वारा समय-समय पर अपना रुख बदलने के तरीके पर अपनी कड़ी नाराजगी दर्ज करता है।

माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों और अन्य श्रेणियों के कर्मचारियों के लिए अवरोध को दूर करने और पदोन्नति के अवसर खोलने के लिए, बिहार राज्य सरकार ने, सरन सिंह समिति

के प्रतिवेदन की अनुशंसा को स्वीकार करते हुए, दिनांक 11.4.1977 की अधिसूचना जारी की जिसके अनुसार शिक्षकों और स्टेडियम प्रबंधकों के पदों को बिहार शिक्षा सेवा संवर्ग में शामिल किया जाता। हालांकि, उक्त अधिसूचना के क्रियान्वयन न होने से मुकदमे शुरू हो गई और अंततः, सर्वोच्च न्यायालय ने अपने दिनांक 19.04.2006 के आदेश द्वारा, राज्य सरकार द्वारा दायर अपील को खारिज करते हुए, उसे दिनांक 11.4.1977 की अधिसूचना को लागू करने का निर्देश दिया। परिणामस्वरूप, राज्य सरकार ने दिनांक 3.7.2006 के अपने निर्णय द्वारा अधीनस्थ शिक्षा सेवा के पदों को 1.7.1977 से बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-॥ में उन्नत करने का प्रस्ताव रखा। तदनुसार, बिहार के राज्यपाल का आदेश 7.7.2006 को जारी किया गया जिसमें कहा गया कि अधीनस्थ सेवा (शिक्षण शाखा) के शिक्षकों को वित्त विभाग की अधिसूचना दिनांक 11.4.1977 के अनुसार 1.7.1977 से बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-॥ में विलय कर दिया गया। तत्पश्चात, तीन शिक्षकों के संबंध में दिनांक 7.7.2006 के संकल्प को प्रभावी करते हुए दिनांक 9.10.2006 की अधिसूचना जारी की गई। इसके बाद बिहार शिक्षा सेवा कर्मचारियों ने विनिर्दिष्ट आदेश याचिका संख्या 10091/2006 दायर की। एकल न्यायाधीश ने सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 19.04.2006 के अपने आदेश में की गई टिप्पणियों का हवाला देते हुए कि यह उच्च न्यायालय को तय करना है कि राज्य सरकार की अधिसूचना को अपेक्षित तरीके से लागू किया गया था या नहीं, यह माना कि समिति की सिफारिश को स्वीकार करने का सरकार का निर्णय केवल विविध संवर्ग के संबंध में था और ऐसा करते समय राज्य सरकार के लिए बिहार अधीनस्थ शिक्षा सेवा की शिक्षण शाखा को बिहार शिक्षा सेवा में विलय करने का निर्णय लेने का कोई कारण नहीं था। विनिर्दिष्ट आदेश याचिका को स्वीकार कर लिया गया और 7.7.2006 के संकल्प को अभिखंडित कर दिया गया। तदनुसार, राज्य सरकार ने 7.7.2006 के संकल्प को अभिखंडित करते हुए 19.11.2007 की अधिसूचना जारी की। माध्यमिक विद्यालय शिक्षक

संघ और व्यक्तिगत शिक्षकों द्वारा दायर लेटर्स पेटेंट अपील को उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने खारिज कर दिया।

वर्तमान अपीलों में, माध्यमिक विद्यालय शिक्षक संघ की ओर से मुख्य रूप से यह तर्क दिया गया कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 19.4.2006 को पारित निर्णय के बाद, उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा पूरे विवाद को फिर से खोलना स्वीकार्य नहीं था।

अपीलों का निपटारा करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1.1. यह ध्यान देने योग्य है कि मुकदमे के पहले दौर के अंत में, अपीलकर्ता द्वारा दायर याचिका को एकल न्यायाधीश द्वारा स्वीकार कर लिया गया था, और उस आदेश को उच्च न्यायालय की खंडपीठ के साथ-साथ इस न्यायालय द्वारा भी अपीलों में अपरिवर्तित छोड़ दिया गया था। आदेशों के बावजूद, राज्य सरकार ने मुकदमे के पहले दौर में मान्य माने गए तरीके से 11.4.1977 की अधिसूचना को लागू करने के लिए कदम नहीं उठाए। इस निष्क्रियता के कारण 11.4.1977 की अधिसूचना को लागू करने और अधीनस्थ शिक्षकों को बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-II में विलय करने के लिए एक और विनिर्दिष्ट आदेश याचिका संख्या 8679/2002 दायर की गई। सरकार की फाइलों पर मौजूद टिप्पणी से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि शिक्षा विभाग ने यह समझ लिया था कि अधिसूचना के क्रियान्वयन के लिए दोनों संवर्गों का विलय आवश्यक है और इस उद्देश्य से वित्त विभाग के अनुमोदन के लिए एक मसौदा प्रस्ताव तैयार किया था। इस तथ्यात्मक परिदृश्य को देखते हुए और पिछले आदेशों को ध्यान में रखते हुए एकल न्यायाधीश ने विनिर्दिष्ट आदेश याचिका संख्या 8679/2002 को स्वीकार कर लिया और अधीनस्थ शिक्षकों के बिहार शिक्षा सेवा में विलय के लिए कदम उठाने का निर्देश दिया। बिहार राज्य की अपील को भी उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने यह कहते हुए

खारिज कर दिया कि विवाद पहले ही सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों के साथ अंतिम रूप ले चुका है। इस न्यायालय द्वारा पारित 19.4.2006 के आदेश को इसी पृष्ठभूमि में पढ़ा जाना चाहिए। उक्त आदेश में इस न्यायालय ने दर्ज किया है कि 1977 में पारित अधिसूचना का इतने लंबे समय तक क्रियान्वयन न होने से उसकी अंतरात्मा को आघात पहुँचा है। न्यायालय ने विशेष रूप से दर्ज किया कि उच्च न्यायालय में शिक्षकों के पक्ष में दायर विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाएँ स्वीकार कर ली गई थीं, जिनमें कहा गया था कि संबंधित सरकारी अधिसूचना में इस तरह के विलय की परिकल्पना की गई है। अब केवल यह देखना बाकी था कि क्या अधिसूचना द्वारा अपेक्षित तरीके से क्रियान्वयन किया गया है। यह भी प्रासंगिक है कि राज्य सरकार द्वारा दायर दीवानी अपील को खारिज करने से पहले, न्यायालय ने यह दर्ज किया कि सरकार भी अपीलकर्ताओं द्वारा सुझाए गए तरीके से अधिसूचना को लागू करने पर विचार कर रही है। इसलिए, अंततः, न्यायालय ने निर्देश दिया कि उच्च न्यायालय मामले की जाँच करेगा और यदि वह संतुष्ट हो कि अधिसूचना लागू नहीं हुई है, तो अवमाननाकर्ताओं के साथ कानून के अनुसार व्यवहार करेगा। इसलिए, न्यायालय ने अवमानना कार्यवाही पर लगी रोक को तत्काल हटा दिया। [कंडिका 33-35] [79-डी-एच; 80-ए-डी-एफ-एच; 81-ए]

1.2. इस प्रकार, अब केवल विनिर्दिष्ट आदेश याचिका संख्या 8679/ 2002 में लंबित अवमानना याचिका पर निर्णय करना शेष रह गया था। बिहार राज्य ने अब तक के निर्णयों को सही ढंग से समझा है और इसलिए, 7.7.2006 का प्रस्ताव पारित किया है, जिसमें इस दृष्टिकोण को स्वीकार किया गया है, जिसे उच्च न्यायालय के साथ-साथ इस न्यायालय ने भी स्वीकार किया है। इसमें दोनों संवर्गों के विलय और शिक्षकों के उन्नयन की सिफारिश की गई है। प्रस्ताव में यह भी दर्ज किया गया है कि विलय से न तो कोई गंभीर वित्तीय प्रभाव पड़ेगा और न ही यह कई कर्मचारियों की वरिष्ठता को प्रभावित करेगा क्योंकि विलय किए जाने वाले

अधिकांश कर्मचारी या तो सेवानिवृत्त हो चुके हैं या सेवानिवृत्ति के कगार पर हैं। [कंडिका 36]

[81-8-सी]

1.3. इस पृष्ठभूमि में, जब बिहार शिक्षा सेवा के कर्मचारियों ने विनिर्दिष्ट आदेश याचिका संख्या 10091/2006 दायर की, तो राज्य सरकार ने अपने दिनांक 7.7.2006 के संकल्प का उचित बचाव किया। हालांकि, एकल न्यायाधीश इस न्यायालय के निर्णय के महत्व को समझने में विफल रहे और उन्होंने सोचा कि पहले दो दौर में दिए गए निर्णयों के बावजूद उन्हें विवाद को फिर से खोलने की स्वतंत्रता है। इसलिए, उन्होंने उस विनिर्दिष्ट आदेश याचिका को स्वीकार करते हुए आदेश पारित किया। राज्य सरकार ने एक बार फिर अपना रुख बदला और दिनांक 7.7.2006 के संकल्प को निरस्त करते हुए एक अधिसूचना जारी की। राज्य सरकार से इसकी उम्मीद नहीं थी। दुर्भाग्य से, उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने भी इस विवाद को एक बार फिर से खोलने की मंजूरी दे दी। [कंडिका 37] [81-डी-एफ]

1.4. न्यायालयों के पदानुक्रम के अनुसार उच्च न्यायालयों को भी इस न्यायालय के निर्णय और कार्यपालिका द्वारा जारी आदेशों की इसकी व्याख्या को स्वीकार करना आवश्यक है। इससे कोई भी विचलन केवल अनुशासनहीनता और अराजकता को ही जन्म देगा। उच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 141 की अनदेखी नहीं कर सकते, जिसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि इस न्यायालय द्वारा घोषित कानून भारत के क्षेत्र के सभी न्यायालयों पर बाध्यकारी है। जब किसी न्यायालय के निर्णय की पुष्टि उच्चतर न्यायालय द्वारा की जाती है, तो न्यायिक अनुशासन के अनुसार उस न्यायालय को उस निर्णय को स्वीकार करना आवश्यक है और उसे संपार्श्विक कार्यवाही में पुष्टि किए गए निर्णय के विपरीत निर्णय नहीं लिखना चाहिए। [कंडिका 39] [82-ई-एफ; 83-ए-बी]

पश्चिम बंगाल राज्य एवं अन्य बनाम शिवानंद पाठक एवं अन्य 1998 (5) एससीसी 513; फुजलुनबी बनाम के. खादर वली एवं एक अन्य 1980 (3) एससीआर 1127 = 1980 (4) एसएससी 125 - अवलंबित।

1.5. 11.4.1977 की अधिसूचना के संबंध में, इस न्यायालय द्वारा कार्यवाही के दूसरे दौर के अंत में पारित 19.4.2006 के आदेश में किसी भी प्रकार की अस्पष्टता नहीं थी, और राज्य सरकार से अपेक्षा की गई थी कि वह उसका पालन और सम्मान करेगी। 7.7.2006 का सरकारी प्रस्ताव तर्कसंगत है और गतिरोध की गंभीरता को कम करने के लिए उचित रूप से जारी किया गया है। समस्या का समाधान चाहे 11.4.1977 की अधिसूचना पर आधारित हो या 7.7.2006 के प्रस्ताव के तहत स्वतंत्र रूप से, उसमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं था। [कंडिका 38] [82-बी-डी]

1.6. वैसे भी, हालाँकि नियमों में अधीनस्थ शिक्षकों के लिए पदोन्नति का एक माध्यम उपलब्ध है, वास्तव में उनके लिए पदोन्नति की संभावनाएँ बहुत कम हैं। जहाँ तक अधीनस्थ शिक्षकों का संबंध है, एक गंभीर गतिरोध है। सरन सिंह समिति का गठन मूलतः इसी मुद्दे पर विचार करने के लिए किया गया था। राज्य सरकार द्वारा 11.4.1977 को जारी अधिसूचना में समिति की सिफ़ारिश को अनुमोदित किया गया, लेकिन सिफ़ारिश को अनुमोदित करते समय प्रयुक्त शब्दावली थोड़ी भिन्न है। इस बात पर कोई विवाद नहीं हो सकता कि सिफ़ारिश पर उचित निर्णय लेना राज्य सरकार का काम था। समिति द्वारा की गई सिफ़ारिशों को निश्चित रूप से सरकार के समक्ष रखी गई आलेख के रूप में देखा जाना चाहिए। हालाँकि, अंततः सरकार का निर्णय ही प्रासंगिक है और, इसलिए, राज्य सरकार की अधिसूचना में प्रयुक्त शब्दों पर ध्यान देना होगा। राज्य सरकार द्वारा प्रयुक्त शब्दों में स्वीकृत अनुशांसा है, "शिक्षक जैसे विभिन्न पदों और स्टेडियम प्रबंधक आदि के पदों को बिहार शिक्षा सेवा संवर्ग में शामिल

किया जाना चाहिए और इन पदों पर संवर्ग के अधिकारियों की नियुक्ति की जानी चाहिए।” शिक्षा विभाग ने इस अधिसूचना को स्पष्ट रूप से समझा। राज्य सरकार ने भी मुकदमे के दूसरे दौर की समाप्ति पर इस न्यायालय के निर्णय के बाद 7.7.2006 को (वित्त विभाग की सहमति से) प्रस्ताव पारित किया था। [कंडिका 40-41] [83-डी-ई-जी-एच; 84-ए-ई]

1.7. संवर्ग के विलय का निर्णय नीतिगत मामला है। यह राज्य को तय करना है कि किन संवर्गों का विलय किया जाना चाहिए, जब तक कि निर्णय मनमाना या अनुचित न हो। 7.7.2006 का संकल्प तर्कसंगत और न्यायोचित है, और इसे मनमाना या अनुचित नहीं कहा जा सकता कि संविधान के अनुच्छेद 14 के अंतर्गत होने योग्य है। इसे संधारित रखा जाना चाहिए। यह संभव है कि विलय कुछ कर्मचारियों की संभावनाओं को प्रभावित करे, लेकिन यह विलय को अपास्त करने का कारण नहीं हो सकता। एक बार जब राज्य सरकार किसी वाद में दो संवर्गों के विलय का आवश्यक निर्णय ले लेती है, तो राज्य सरकार से अपेक्षित है कि वह आवश्यक नियम बनाकर उसका पालन करे। श्रेणी-I और श्रेणी-II राज्य सेवाओं के रूप में वर्गीकृत पदों के अलावा अधीनस्थ सेवा के सभी पदों का उल्लेख बिहार सेवा संहिता, 1952 के परिशिष्ट-16 में मद 119 में किया गया है। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता कि अधीनस्थ शिक्षक राज्य सेवा से संबंधित नहीं थे। [कंडिका 42-43] [84-एफ-एच; 85-ए-बी-सी]

एस.पी. शिवप्रसाद पीपल बनाम भारत संघ एवं अन्य 1998 (4) एससीसी 598 - अवलंबित।

1.8. एकल न्यायाधीश, जिन्होंने याचिका दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 10091/2006 पर सुनवाई की, जिसने बिहार शिक्षा सेवा संघ की ओर से दायर मुकदमे के तीसरे दौर की शुरुआत की, को पूरे विवाद को अन्यथा भी, फिर से नहीं खोलना चाहिए था। राज्य सरकार ने

इस न्यायालय के 19.4.2006 के आदेश के बाद 7.7.2006 को एक प्रस्ताव पहले ही पारित कर दिया था। उस प्रस्ताव की वैधता की जाँच करते समय (जिसका बचाव राज्य सरकार ने इस स्तर पर एकल न्यायाधीश के समक्ष किया था) पूरे विवाद पर एक बार फिर से विचार किया गया। निर्णयों की अंतिमता का नियम, जो कि पूर्व न्याय के सिद्धांत या उसके समान सिद्धांतों में निहित है, ऐसी किसी भी पुनः जाँच की अनुमति नहीं देता है, और न्यायाधीश स्पष्ट रूप से इसे पहचानने में विफल रहे। उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा लेटर्स पेटेंट अपील संख्या 418/2009 में दिनांक 21.5.2010 को पारित निर्णय और एकल न्यायाधीश द्वारा दीवानी रिट क्षेत्राधिकार सं.10091/2006 में दिनांक 31.10.2007 को पारित निर्णय को अपास्त किया जाता है और उक्त विनिर्दिष्ट आदेश याचिका खारिज की जाती है। परिणामस्वरूप, एकल न्यायाधीश के निर्णय के अनुसरण में जारी दिनांक 19.11.2007 की अधिसूचना भी अभिखंडित और अपास्त मानी जाएगी। राज्य सरकार का दिनांक 7.7.2006 का संकल्प संधारित रखा जाता है। राज्य तदनुसार कार्यवाही करेगा। [कंडिका 44-45] [85-डी-एच; 86-ए-बी]

2. इस मामले में राज्य सरकार के रवैये ने बड़ी संख्या में शिक्षकों को अनावश्यक रूप से चिंतित कर दिया है। राज्य सरकार को यह समझना चाहिए कि ऐसे देश में जहाँ इतनी निरक्षरता है और जहाँ बड़ी संख्या में पहली पीढ़ी के छात्र हैं, प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षकों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। उनके साथ सम्मानजनक व्यवहार किया जाना चाहिए और उन्हें उचित वेतन और पदोन्नति के अवसर दिए जाने चाहिए। राज्य सरकार से यह अपेक्षा बिल्कुल नहीं की जाती कि वह उन्हें वर्षों तक मुकदमे में न्यायालय में घसीटे। यह न्यायालय बिहार राज्य द्वारा समय-समय पर अपना रुख बदलने के तरीके पर अपनी कड़ी नाराजगी व्यक्त करता है। राज्य सरकार से इसकी अपेक्षा नहीं की जाती है। जिस तरह से एकल न्यायाधीश ने विनिर्दिष्ट आदेश याचिका सं. 10091/2006 के माध्यम से पूरे विवाद को फिर से खोला, और

जिस तरह से उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने लेटर्स पेटेंट अपील संख्या 418/2009 में उस दृष्टिकोण को मंजूरी दी, वह भी संतोषजनक नहीं है। यदि इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश राज्य सरकार या किसी भी पक्ष को स्पष्ट नहीं थे, तो वह निश्चित रूप से इस न्यायालय से स्पष्टीकरण के लिए संपर्क कर सकता था। लेकिन वह एक संपार्थिक कार्यवाही में विपरीत तर्क नहीं दे सकता था। राज्य सरकार से और विशेष रूप से उच्च न्यायालय से इस तरह के दृष्टिकोण की अपेक्षा नहीं थी। [कंडिका 46 और 47] [85-सी-एच]

नज़ीर सन्दर्भ:

1998 (5) एससीसी 513	अवलंबित	कंडिका 39
1980 (3) एससीआर 1127	अवलंबित	कंडिका 39
1998 (4) एससीसी 598	अवलंबित	कंडिका 42

दीवानी अपीलिय क्षेत्राधिकार: 2012 का दीवानी अपील संख्या 8226-8227.

दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 8679/2002 और लेटर्स पेटेंट अपील संख्या 418/2009 में पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 21.5.2010 के निर्णय एवं आदेश से।

के साथ

वि.अ.या.(दी.) संख्या 26675-26676/2010 में अवमानना याचिका (दी.) संख्या 386-387/2011.

पी.एस. पटवालिया, देबल के. बनर्जी, नागेंद्र राय, अमित पवन, राजीव कुमार सिन्हा, कुमार प्रशांत, समीर अली खान, मनीष कुमार, गोपाल सिंह, अखिलेश कुमार पांडे, शालिनी

चंद्रा, सुधांशु सरन, स्वाति चंद्रा, अरुण कुमार, बी.के.चौधरी, रामेश्वर प्रसाद गोयल, तपेश के. सिंह, उपस्थित पक्षों की ओर से।

न्यायालय का निर्णय

एच.एल. गोखले, न्यायमूर्ति द्वारा सुनाया गया। 1. अनुमति प्रदान की गई।

2. विशेष अनुमति द्वारा दायर ये दोनों दीवानी अपीलें उच्च न्यायालयों और राज्य सरकारों से इस न्यायालय द्वारा पारित आदेशों और सरकारी प्रस्तावों की व्याख्याओं के प्रति अपनाए जाने वाले दृष्टिकोण के संबंध में प्रश्न उठाती हैं। यह प्रश्न बिहार सरकारी सेवा में शिक्षकों के लिए पदोन्नति के अवसरों से संबंधित मुकदमे के संदर्भ में उठता है।

प्रासंगिक तथ्य:

3. इन दोनों दीवानी अपीलों के तथ्य इस प्रकार हैं:

बिहार राज्य, जो इन दोनों अपीलों में उत्तरदाता संख्या 66 है, ने मार्च 1976 में एक तीन सदस्यीय समिति का गठन किया, जिसके अध्यक्ष, राजस्व परिषद के सदस्य और प्रशासनिक सुधार आयुक्त श्री सरन सिंह थे। इस समिति के विचारार्थ विषय इस प्रकार थे:

" बिहार सिविल सेवा में पदोन्नति के अवसरों को तीव्र करने के लिए, सरकार ने कनीय चयन ग्रेड 20%, वरीय चयन ग्रेड 12.50% और वरीय उप समाहर्ता के पदों के लिए 2.5% की मंजूरी दी है। बिहार अभियांत्रिकी सेवा में कनीय चयन ग्रेड और वरीय चयन ग्रेड के लिए समान प्रतिशत लागू किया गया है। इस आधार पर, विभिन्न राज्य सेवा संघों से अनुरोध आ रहे हैं कि

उनके संवर्गों में पदोन्नति के अवसरों की कमी के कारण अवरोध है, जिसे दूर किया जाना चाहिए।

1.2. इसलिए, विभिन्न राज्य सेवा संवर्गों में पदोन्नति के अवसरों की संख्या और वर्तमान अवसरों को ध्यान में रखते हुए, अवरोध की समस्या का विश्लेषण करने और इस समस्या से निपटने के उपायों और पदोन्नति के अवसरों की सिफारिश करने के लिए, निम्नलिखित अधिकारियों की एक समिति गठित की जाती है:

- (1) सदस्य, राजस्व परिषद - अध्यक्ष
- (2) अध्यक्ष, लोक शिकायत ब्यूरो - सदस्य
- (3) वित्त आयुक्त - सदस्य

4. समिति ने विभिन्न विभागों द्वारा प्रस्तुत तथ्यों और आंकड़ों के आधार पर अपने निष्कर्ष निकाले। जैसा कि प्रतिवेदन में कहा गया है, समिति का उद्देश्य यह पता लगाना था:

(क) विभिन्न सेवाओं में अपेक्षाकृत अवरोध की सीमा क्या है, और पदोन्नति की वर्तमान संभावनाएँ क्या हैं, और

(ख) अवरोध को कैसे दूर किया जा सकता है और पदोन्नति के अवसरों को कैसे बढ़ाया जा सकता है।

5. समिति ने पाया कि सभी सेवा संघों ने पदोन्नति के पदों के उसी प्रतिशत के लिए दावा किया जो बिहार सिविल सेवा और बिहार अभियांत्रिकी सेवा को दिया गया था। समिति द्वारा अवरोध के दो कारण बताए गए: (i) कुछ वर्षों में समान आयु वर्ग के अधिकारियों की

अपेक्षाकृत अधिक भर्ती, (ii) और संगठनात्मक पदानुक्रम के विभिन्न स्तरों पर पर्याप्त संख्या में पदोन्नति पदों का अभाव। विभिन्न सेवाओं के संबंध में समिति की सिफारिशें इसके प्रतिवेदन के भाग 111 में हैं। जहाँ तक बिहार शिक्षा सेवा का संबंध है, इसकी चर्चा इसके कंडिका (9) में की गई है। सबसे पहले, समिति ने वर्ग-॥ के अधिकारियों की वर्ग-। में पदोन्नति की संभावनाओं पर विचार किया। फिर उप-कंडिका ख में इसने संस्कृत, प्राकृत और फ़ारसी पढ़ाने वाले विशिष्ट संस्थानों में पदों पर विचार किया। इसके बाद उप-कंडिका ग में विविध संवर्ग पर विचार किया गया है। इस भाग का विश्लेषण और सिफारिशें इस प्रकार हैं:

"ग. विविध संवर्ग"

11.10. इस सेवा में शिक्षक, अभियंता, चिकित्सक, स्टेडियम प्रबंधक आदि विभिन्न श्रेणियों के 59 पद हैं और नेतरहाट विद्यालय के शिक्षकों को छोड़कर, जिनके संवर्ग में पदोन्नति की पर्याप्त संभावनाएँ हैं, संवर्ग के अधिकांश सदस्य पृथक पदों पर हैं, जिनमें पदोन्नति की कोई निश्चित संभावना नहीं है। उनके कार्य की पृथक प्रकृति के कारण कोई पदोन्नति पद प्रदान नहीं किया जा सकता है।

तथापि, उनके वाद में कठिनाइयों को कम करने के लिए, समिति शिक्षा विभाग के विचारार्थ निम्नलिखित सुझाव देना चाहेगी:-

- (1) शिक्षा विभाग अभियंताओं के पदों को लोक निर्माण विभाग के संवर्ग में शामिल करवा सकता है और उनकी सेवाएँ प्रतिनियुक्ति के आधार पर प्राप्त कर सकता है।
- (2) चिकित्साकर्मियों के दो पदों को भी स्वास्थ्य सेवा में शामिल करवाया जा सकता है और चिकित्सकों की सेवाएँ प्रतिनियुक्ति के आधार पर प्राप्त की जा सकती हैं।

(3) शेष पदों को सामान्य संवर्ग में शामिल किया जाना चाहिए और जहाँ तक संभव हो, बिहार शिक्षा सेवा के अधिकारियों द्वारा नियुक्त किया जाना चाहिए।"

समिति ने सुझाव दिया कि प्रस्ताव 1 जनवरी, 1977 से लागू होने चाहिए।

6. समिति की सिफारिशें राज्य सरकार द्वारा स्वीकार कर ली गईं और राज्य सरकार (वित्त विभाग) ने 11.4.1977 को एक अधिसूचना जारी की, जिसे बाद में 27.4.1977 को असाधारण राजपत्र में प्रकाशित किया गया। सिफारिशों के संबंध में निर्णय अधिसूचना की अनुसूची-1 में निहित था। जहाँ तक शिक्षा विभाग और विविध संवर्ग का संबंध है, अधिसूचित निर्णय इस प्रकार है:

अनुसूची- 1

क्रमांक	समिति प्रतिवेदन की कंडिका सं.	पृष्ठ सं.	विभाग	सेवा का नाम	समिति की अनुशंसा	सरकार का निर्णय
1	2	3	4	5	6	7
7	1.10	25	शिक्षा विभाग	विविध संवर्ग	1) कृपया शिक्षा विभाग के अभियंताओं के पद को बिहार अभियांत्रिकी सेवा संवर्ग में विलय कर दें और प्रतिनियुक्ति के माध्यम से अभियंताओं	स्वीकृत

					की सेवाएँ लें।	
					2) चिकित्सकों के पदों को बिहार स्वास्थ्य सेवा संवर्ग में शामिल किया जाना चाहिए और आवश्यकतानुसार उनकी सेवा प्रतिनियुक्ति पर भी ली जानी चाहिए।	स्वीकृत
					3) विभिन्न पद जैसे शिक्षक (नेतरहाट के शिक्षकों को छोड़कर) और स्टेडियम प्रबंधक आदि के पदों को बिहार शिक्षा सेवा संवर्ग में शामिल किया जाना चाहिए और संवर्ग के अधिकारियों को इन पदों पर नियुक्त किया जाना चाहिए।	स्वीकृत

(जोर दिया गया)

मुकदमे का पहला दौर

7. याचिकाकर्ता माध्यमिक विद्यालय शिक्षक संघ का वाद यह है कि यद्यपि यह अधिसूचना राज्य सरकार द्वारा 11.4.1977 को जारी की गई थी, राज्य सरकार ने इसे लागू करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया। उन्होंने समय-समय पर इसके क्रियान्वयन के लिए प्रतिनिधित्व किया, लेकिन इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उन्हें पता चला कि वर्ष 1986 में एक अंतिम क्रमोन्नति सूची तैयार की गई थी, लेकिन इसे कभी भी प्रसारित नहीं किया गया और न ही याचिकाकर्ता संघ को इसकी जानकारी दी गई। 1995 में एक और क्रमोन्नति सूची तैयार की गई, और उन्होंने पाया कि इसमें याचिकाकर्ता संघ के सदस्यों को छोड़ दिया गया था। एक बार फिर दो प्रत्यावेदन किए गए, जिनमें से एक 25.5.1998 को किया गया था, लेकिन उसका भी कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इसलिए, वे बिहार राज्य और संबंधित अधिकारियों के खिलाफ **1998 की विनिर्दिष्ट आदेश याचिका संख्या 12122** दायर करने के लिए बाध्य हुए। इस याचिका में उन्होंने विशेष रूप से दावा किया था कि (क) 11.4.1977 की उपरोक्त अधिसूचना में उनके संवर्ग का बिहार शिक्षा सेवा में विलय करने का प्रावधान था, जिसमें द्वितीय श्रेणी के कर्मचारी शामिल हैं, और (ख) कि कोई भी नियुक्ति और आगे की पदोन्नतियाँ संयुक्त संवर्ग से की जाएँगी। इसलिए याचिका में प्रार्थना की गई थी

(1) दिनांक 11.4.1977 की अधिसूचना में निहित निर्णय को लागू करने के लिए निर्देश देने के लिए।

(2) याचिकाकर्ता संघ के सदस्यों को अन्य घटकों के साथ उनके उचित स्थानों पर रखने के बाद बिहार शिक्षा सेवा वर्ग II की एक संयुक्त क्रमोन्नति सूची तैयार करने के लिए निर्देश देने के लिए।

(3) उत्तरदाताओं को 1995 की दोषपूर्ण क्रमोन्नति सूची पर कार्रवाई करने से रोकने के लिए।

(4) परिणामी अनुतोष के लिए, जिसका अर्थ समय-समय पर नियुक्त वेतन पुनरीक्षण समितियों की सिफारिशों के अनुसार वेतन और भत्ते में वृद्धि है।

8. यह ध्यान रखना प्रासंगिक है कि इस याचिका में उन्होंने विशेष रूप से कंडिका 5 में तर्क दिया है कि उनका चयन भी लोक सेवा आयोग/केंद्रीय चयन समिति के माध्यम से हुआ था, और उनके पास आवश्यक प्रशिक्षण के साथ स्नातक होने की योग्यता भी थी, और 1965 के बाद से उनके पास मास्टर डिग्री भी होनी चाहिए थी। याचिका के कंडिका 6 में उन्होंने तर्क दिया कि सरन सिंह समिति ने विलय की सिफारिश की थी, जिसके बावजूद त्रुटिपूर्ण क्रमोन्नति सूचियाँ तैयार की गईं, पहले 19.7.1986 को और उसके बाद 13.11.1995 को, जो 11.4.1977 की अधिसूचना के विपरीत थीं।

9. दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 8147/ 1999 वाली एक और विनिर्दिष्ट आदेश याचिका कुछ शिक्षकों, जैसे श्रीमती रतन प्रभा और अन्य, द्वारा दायर की गई थी। इस याचिका में वेतन विसंगति के मुद्दे की ओर ध्यान आकर्षित किया गया था। उन्होंने 11.4.1977 की अधिसूचना का भी हवाला दिया और बिहार शिक्षा सेवा के लिए एक सामान्य वरिष्ठता सूची तैयार करने की प्रार्थना की। दोनों विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाओं पर एक साथ सुनवाई हुई। राज्य सरकार ने पर्याप्त समय दिए जाने के बावजूद कोई प्रतिवाद दायर नहीं किया। पटना उच्च न्यायालय के विद्वान

एकल न्यायाधीश ने अपने आदेश में कहा कि ऐसा प्रतीत होता है कि विलय के आदेश जारी नहीं किए गए थे और वाद राज्य सरकार के पास लंबित थी, हालाँकि इस बीच एक या दूसरे शिक्षक संवर्ग के लिए अलग से क्रमोन्नति सूची प्रकाशित की जा चुकी थी। इसलिए विद्वान एकल न्यायाधीश ने 2.2.2000 को निम्नलिखित आदेश पारित किया।

"इन परिस्थितियों में, मैं बिहार सरकार के माध्यमिक, प्राथमिक एवं जन शिक्षा आयुक्त सह सचिव को निर्देश देता हूँ कि वे दिनांक 11.4.1977 के संकल्प में निहित सरकारी निर्णय के अनुसार कार्य करें, जहाँ तक यह शिक्षा विभाग की शिक्षा सेवा से संबंधित है।"

10. बिहार राज्य दोनों विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाओं में पारित इस सामान्य आदेश से व्यथित है, और इसलिए उसने 2000 के दो लेटर्स पेटेंट अपील संख्या 980 और 998 दायर किए। राज्य सरकार ने तर्क दिया कि अधीनस्थ शिक्षकों को बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-॥ में विलय करने का कोई प्रस्ताव नहीं था। आगे यह भी बताया गया कि बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-॥ के 50% पद अधीनस्थ शिक्षकों की पदोन्नति से भरे गए थे। हालाँकि, अपीलकर्ताओं ने यह कहते हुए इसका खंडन किया कि तथ्यात्मक रूप से, शायद ही ऐसी कोई पदोन्नति हुई हो। उन्होंने यह भी बताया कि दिनांक 11.4.1977 की अधिसूचना को अन्य सेवाओं में उसी तरह लागू किया गया था जिस तरह से प्रचार किया गया था। खंडपीठ ने इन दोनों अपीलों को 27.11.2000 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया, जिसमें उन्होंने कहा:-

"हमारे विचार में, चूंकि इस न्यायालय ने दिनांक 2.2.2000 के आदेश द्वारा सरकार को दिनांक 11.4.1977 के संकल्प के अनुसार निर्णय लेने का विशेष निर्देश दिया

हैं, इसलिए राज्य के लिए ऐसे आदेश से असंतुष्ट होने का कोई कारण नहीं प्रतीत होता है।

11. राज्य सरकार ने विशेष अनुमति याचिका संख्या 4937- 4938/2001 के माध्यम से इस न्यायालय में मामला आगे बढ़ाया, और इस न्यायालय ने अपने दिनांक 16.4.2001 के आदेश द्वारा दोनों विशेष अनुमति याचिकाओं को खारिज कर दिया, जो इस प्रकार हैं:

"कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति श्री बी.एन. कृपाल

माननीय न्यायमूर्ति श्रीमती रुमा पाल

"अधिवक्ता को सुनने के बाद न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया

आदेश

यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता को 27 अप्रैल, 1977 के संकल्प को उसी प्रकार लागू करने का अंतिम निर्देश दिया गया है जिस प्रकार से इसे लागू किया जाना है। याचिकाओं का निपटारा किया जाता है।"

मुकदमे का दूसरा दौर

12. हालांकि, यह देखा गया है कि उपरोक्त पारित आदेशों के बावजूद, बिहार राज्य ने शिक्षकों के अधीनस्थ संवर्ग का बिहार शिक्षा सेवा में विलय और वेतन में परिणामी वृद्धि के लिए आवश्यक आदेश जारी नहीं किए। इसके कारण अधीनस्थ सेवा के एक शिक्षक, श्री जनार्दन राय ने एक नई विनिर्दिष्ट आदेश याचिका, 2002 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 8679 दायर की।

उन्होंने उपरोक्त पारित आदेशों का हवाला दिया और राज्य सरकार की अधिसूचना दिनांक 11.4.1977 और उपर्युक्त दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 12122/1998 में पारित दिनांक 2.2.2000 के आदेश के अनुसार वेतन निर्धारण के साथ परिणामी लाभों की प्रार्थना की, जिसे सर्वोच्च न्यायालय ने संधारित रखा था।

13. इस याचिका का बिहार राज्य के अपर वित्त आयुक्त ने शपथपत्र दायर करके विरोध किया। कंडिका 13 में, उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि उपरोक्त अधिसूचना में निहित निर्णय सरकारी उच्च विद्यालयों के शिक्षकों के अराजपत्रित संवर्ग से संबंधित नहीं है, और इसलिए, माननीय न्यायालय के आदेश के क्रियान्वयन के लिए अधीनस्थ शिक्षा सेवा का बिहार शिक्षा सेवा में विलय आवश्यक नहीं है। कंडिका 25 में, उन्होंने तर्क दिया कि 1977 की अधिसूचना की अनुसूची-1 की मद संख्या 7 में उल्लिखित 'शिक्षक' शब्द शिक्षकों के उन पृथक पदों को संदर्भित करता है जो व्यापक सेवा, अर्थात् बिहार शिक्षा सेवा का हिस्सा थे, लेकिन जिनके पास कोई उचित संवर्ग नहीं था, और इसलिए उनके लिए पदोन्नति के कोई अवसर उपलब्ध नहीं थे। कंडिका 26 में उन्होंने तर्क दिया कि सरन सिंह समिति के प्रतिवेदन ने स्पष्ट कर दिया था कि प्रतिवेदन विशेष रूप से राजपत्रित राज्य सेवाओं के अंतर्गत संवर्गों के बारे में थी।

14. बिहार सरकार के माध्यमिक, प्राथमिक एवं जन शिक्षा विभाग के निदेशक (प्रशासन) सह उप सचिव ने दो शपथपत्र दायर किए। पहले शपथपत्र में, उन्होंने कंडिका 4(ग) में कहा कि अधिसूचना में 59 पदों का कोई उल्लेख नहीं है, और इसलिए भ्रम की स्थिति पैदा हुई। उन्होंने आगे कहा कि इसलिए, सरकार ने एक विज्ञापन के माध्यम से उन 59 पदों का पता लगाने का और जानकारी मंगवाने का फैसला किया है। हालांकि, दूसरे शपथपत्र के कंडिका 6/ए में, उन्होंने कहा कि अधिसूचना में किसी विलय का कोई उल्लेख नहीं है।

15. विद्वान एकल न्यायाधीश, जिन्होंने याचिका पर सुनवाई की, ने पहले जारी किए गए आदेश को सर्वोच्च न्यायालय के पास भेज दिया और फिर यह टिप्पणी की कि, इसके मद्देनजर, मामले को अंतिम रूप प्राप्त हो जाना चाहिए था। उन्होंने आगे कहा कि यह वास्तव में दुर्भाग्यपूर्ण है कि राज्य ने उपरोक्त आदेशों की व्याख्या करने के लिए फिर से अपना अलग अर्थ देना शुरू कर दिया है, बल्कि यहाँ तक कि यह भी कहा कि कुछ आदेश प्राप्त करने के लिए उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय में कुछ विधिक युक्ति की गई थी। उन्होंने कहा कि राज्य सरकार की फाइलों पर टिप्पणी से यह प्रतीत होता है कि शिक्षा विभाग ने वास्तव में उपरोक्त अधिसूचना को लागू करने का निर्णय लिया था और वित्त विभाग के अनुमोदन के लिए एक मसौदा अधिसूचना तैयार की थी, ताकि 11.4.1977 की अधिसूचना को लागू करने के लिए उच्च न्यायालय के आदेशों का पालन किया जा सके। उन्होंने यह भी दर्ज किया कि उक्त मसौदा अधिसूचना में लगभग 2465 स्वीकृत/सृजित पदों की बात कही गई है। उन्होंने कहा-

"... उक्त मसौदा स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि शिक्षा विभाग ने पाया है कि याचिकाकर्ता और अन्य समान स्थिति वाले व्यक्तियों को भी उपरोक्त प्रस्ताव के मद्देनजर बिहार शिक्षा सेवा में विलय किया जाना आवश्यक था। हालांकि, इस संबंध में अंतिम निर्देश जारी करने से पहले, वित्त विभाग की अंतिम स्वीकृति मांगी गई थी। उक्त प्रस्ताव में 2465 स्वीकृत/सृजित पदों की बात कही गई है। इस प्रकार, ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रस्ताव के गैर-क्रियान्वयन में एकमात्र बाधा वित्त विभाग के अधिकारी हैं, जो उक्त प्रस्ताव को एक अलग अर्थ दे रहे हैं।"

16. इसलिए, विद्वान न्यायाधीश ने वित्त विभाग के अधिवक्ता के तर्कों को विस्तार से सुना और टिप्पणी की कि यदि 11.4.1977 की अधिसूचना को जो अर्थ देने का प्रयास किया जा रहा है, उसे स्वीकार कर लिया जाए, तो बिहार शिक्षा सेवा से संबंधित पूरी अधिसूचना निरर्थक हो

जाएगी। इसके अलावा, उन्होंने टिप्पणी की, "आज अधिकारियों के लिए इसकी कोई अन्य व्याख्या करना संभव नहीं है, बल्कि वे उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों को दबाए बैठे हैं।" इसलिए, उन्होंने उन्हें छह सप्ताह की अवधि के भीतर 1977 की अधिसूचना को पूरी तरह से लागू करने का निर्देश दिया, अन्यथा, उन पर उक्त आदेश और 2.2.2000 के आदेश, साथ ही लेटर्स पेटेंट अपील पीठ और भारत के सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों के उल्लंघन के लिए कार्यवाही की जा सकती है। उन्होंने याचिकाकर्ता को उसी रिट आवेदन में न्यायालय के समक्ष एक याचिका लाने की स्वतंत्रता प्रदान की, ताकि यदि आवश्यक हो, तो गलती करने वाले उत्तरदाताओं के विरुद्ध कानून के अनुसार कार्यवाही की जा सके।

17. इस आदेश को राज्य सरकार ने **लेटर्स पेटेंट अपील संख्या 65/2003** में फिर से चुनौती दी। लेटर्स पेटेंट अपील में अतिरिक्त आधार उठाए गए थे। उनमें से एक यह था कि यदि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा स्वीकृत 'शिक्षक' शब्द की व्याख्या को मंजूरी दे दी जाती है, तो इससे सरकारी सेवा में कार्यरत शिक्षकों के अलावा अन्य शिक्षक भी बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-॥ के लाभों का दावा करने लगेंगे। दूसरे, यह तर्क दिया गया कि अधीनस्थ शिक्षा सेवा राज्य सेवा नहीं है। हालाँकि, उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने 10.3.2003 के अपने आदेश द्वारा लेटर्स पेटेंट अपील को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि विवाद सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के साथ ही अंतिम रूप ले चुका है और इस आदेश को पारित करने से पहले और कुछ भी दर्ज करने की आवश्यकता नहीं है। हालांकि, इस बीच, खंडपीठ ने 27.1.2003 का एक आदेश भी पारित किया था जिसमें मुख्य सचिव, बिहार सरकार और निदेशक प्रशासन, बिहार को अपील में उपस्थित रहकर क्रियान्वयन न होने के बारे में स्पष्टीकरण देने का निर्देश दिया गया था।

18. इन दोनों आदेशों के कारण राज्य सरकार ने **दीवानी अपील संख्या 4466/2003** दायर की, जिसमें पूर्व के आधारों को दोहराया गया। बिहार राज्य सरकार माध्यमिक विद्यालय

शिक्षक संघ के महासचिव जनार्दन राय एवं अन्य की ओर से एक प्रतिवाद दायर किया गया, जिसे इस न्यायालय द्वारा पारित एक आदेश द्वारा उत्तरदाता के रूप में पक्षकार बनाया गया था। इसमें कंडिका 13 में निम्नलिखित रूप से स्पष्ट रूप से कहा गया था:

..... इस प्रकार, चूँकि उत्तरदाता संघ के सदस्य "बी.एस.ई.एस. संवर्ग" नामक एक स्पष्ट रूप से पहचाने जाने योग्य संवर्ग से संबंधित थे और किसी पृथक पद का हिस्सा नहीं थे और चूँकि उनके पदों को "राजपत्रित" घोषित नहीं किया गया था, इसलिए वे स्पष्ट रूप से सरन सिंह समिति द्वारा समाहित की गई राज्य सेवाओं के दायरे में आते थे। यहाँ यह उल्लेख करना भी प्रासंगिक है कि याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रयुक्त "राज्य सेवा" शब्द को कहीं भी परिभाषित नहीं किया गया है। यह 1998 में प्रकाशित बिहार सरकार की फिटमेंट समिति के प्रतिवेदन से स्पष्ट है। इस प्रकार, किसी विशेष परिभाषा के अभाव में, "राज्य सेवा" शब्द का अर्थ राज्य सेवा संहिता द्वारा विनियमित राज्य की सरकारी सेवा होगा।

इस न्यायालय ने अपने दिनांक 19.4.2006, के आदेश द्वारा दीवानी अपील को खारिज कर दिया जिसे हम संपूर्ण रूप से उद्धृत करते हैं:

"भारत के सर्वोच्च न्यायालय में
दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार
2003 का दीवानी अपील संख्या 4466
बिहार राज्य एवं अन्य . . . अपीलकर्ता
बनाम
जनार्दन राय एवं एक अन्य ...उत्तरदाताओं
आदेश

दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया।

1977 में पारित एक सरकारी संकल्प का अभी तक क्रियान्वयन नहीं हुआ है और विभिन्न न्यायालयों के 14 आदेशों के बावजूद यह मुकदमे का विषय बना हुआ है, यह बात इस न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोरती है।

लेटर्स पेटेंट अपील में उच्च न्यायालय का आदेश, जिसके परिणामस्वरूप वर्तमान अपील आई है, एक छोटा (एक कंडिका) आदेश है, लेकिन इसकी पृष्ठभूमि बहुत विस्तृत प्रतीत होती है। दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं ने हमें अभिलेख पर मौजूद विभिन्न दस्तावेजों से अवगत कराया है। अभिलेख और विभिन्न आदेशों का धैर्यपूर्वक अध्ययन करने के बाद, विचार करने योग्य एकमात्र बिंदु यह है कि क्या राज्य सरकार का संकल्प संख्या 3521 एफ 2 दिनांक 11 अप्रैल, 1977 बिहार अधीनस्थ शिक्षा सेवा के सदस्यों, जिनमें पुरुष और महिला शिक्षक शामिल हैं, के संबंध में कार्यान्वित किया गया है। उत्तरदाताओं के अनुसार, इसके क्रियान्वयन का अर्थ होगा बिहार अधीनस्थ शिक्षा सेवा के शिक्षकों के संवर्ग का बिहार शिक्षा सेवा वर्ग 2 में विलय; राज्य सरकार का यह रुख है कि यह संकल्प, जो सरन सिंह समिति (कंडिका 11.10) के प्रतिवेदन को स्वीकार और कार्यान्वित करता है, का बिहार अधीनस्थ शिक्षा सेवा संवर्ग के सदस्यों से कोई लेना-देना नहीं है।

पटना उच्च न्यायालय में विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाएँ दायर की गईं और उन्हें शिक्षकों के पक्ष में यह कहते हुए स्वीकार कर लिया गया कि संबंधित सरकारी प्रस्ताव में इस तरह के विलय का प्रावधान है। उच्च न्यायालय के आदेश के क्रियान्वयन न करने का आरोप लगाते हुए एक अवमानना याचिका भी दायर की गई, जिसमें राज्य को 11 अप्रैल, 1977 के संबंधित प्रस्ताव को लागू करने का निर्देश दिया गया था।

अवमानना याचिका अभी भी उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित है और वर्तमान अपील में इस पर रोक लगा दी गई है।

अंततः, हम इस बात से संतुष्ट हैं कि प्रस्ताव द्वारा अपेक्षित तरीके से क्रियान्वयन किया गया है या नहीं, यह उच्च न्यायालय को तय करना है क्योंकि उच्च न्यायालय अवमानना याचिका पर विचार कर रहा है। इसलिए, हमें लगता है कि हमारे लिए इस मामले में हस्तक्षेप करना आवश्यक नहीं है, खासकर जब हमारा ध्यान विधान सभा में दिए गए उन बयानों की ओर आकर्षित हुआ है कि सरकार स्वयं उत्तरदाताओं द्वारा सुझाए गए तरीके से प्रस्ताव को लागू करने पर विचार कर रही है। किसी भी स्थिति में, चूंकि अवमानना याचिका लंबित है, उच्च न्यायालय मामले की जाँच करेगा और यदि वह संतुष्ट हो जाता है कि प्रस्ताव लागू नहीं किया गया है, तो अवमाननाकर्ताओं के साथ कानून के अनुसार व्यवहार करेगा। इस मामले के इस दृष्टिकोण से, हमें नहीं लगता कि हमारे लिए इसमें हस्तक्षेप करना आवश्यक है।

दीवानी अपील खारिज की जाती है। खर्च के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया गया है।
अवमानना कार्यवाही पर लगी रोक तत्काल प्रभाव से हटाई जाती है।

..... न्यायमूर्ति

(बी.एन. श्रीकृष्ण)

..... न्यायमूर्ति

(लोकेश्वर सिंह पंता)

नई दिल्ली 19 अप्रैल, 2006

19. ऐसा प्रतीत होता है कि मुकदमे के दूसरे दौर में इस न्यायालय के इस "निर्णय" के मद्देनजर, राज्य सरकार ने अंततः अधीनस्थ शिक्षकों द्वारा सुझाए गए निर्णय को अपनाने का निर्णय लिया। मंत्रिमंडल ने 3.7.2006 को आवश्यक निर्णय लिया। प्रशासन द्वारा मंत्रिपरिषद के विचारार्थ तैयार किए गए ज्ञापन में पहले 10 अनुच्छेदों में पूर्व घटनाक्रमों का उल्लेख किया गया था। इस ज्ञापन के कंडिका 11 से 18, जिन्हें मंत्रिमंडल द्वारा अनुमोदित किया गया था, इस प्रकार हैं:

"11. विभाग ने संबंधित वित्तीय भार का एक अनुमान तैयार किया। एक अंतिम अनुमान के अनुसार, अनुमानित राशि का अंतर लगभग 64 करोड़ रुपये है। लेकिन चूँकि लगभग सभी लाभार्थियों को प्रथम एसीपी का लाभ मिल चुका है, इसलिए इस आधार पर एक मामूली राशि घटाने के बाद यह लगभग 48 करोड़ 62 लाख रुपये हो जाता है। इसके अतिरिक्त, बहुत से लाभार्थी द्वितीय एसीपी का लाभ पाने के हकदार हैं। यदि उन्हें दूसरा एसीपी प्रदान किया जाता है, तो अनुमानित राशि और भी कम हो जाएगी।

12. वर्ष 1977 में पुरुष एवं महिला शिक्षकों के कुल सृजित/स्वीकृत पदों की संख्या 2465 थी, जिसके सापेक्ष कुल कार्यरत संख्या 1336 थी, जो वर्ष 2006 तक घटकर 880 रह गई। इसमें से यदि झारखंड की 301 इकाइयों को घटा दिया जाए तो यह संख्या केवल 579 रह जाती है।

13. उल्लेखनीय है कि संकल्प संख्या 3521 दिनांक 11.04.1977 में निहित प्रावधानों के आलोक में कई विभागों ने निम्न वेतनमानों को उच्च वेतनमानों में विलय कर दिया है। परंतु शिक्षा विभाग के इस संवर्ग के पदाधिकारियों को 1977 के

बाद उनकी देय प्रोन्नति से वंचित रखा गया है। जबकि इस संवर्ग के निरीक्षण शाखा के पदाधिकारियों को 2001 तक पदोन्नत किया गया बताया गया है।

14. बिहार शिक्षा सेवा के अधिकारियों ने इस विलय के विरुद्ध अपने अभ्यावेदन में यह आशंका व्यक्त की है कि यह विलय उनके हितों को नुकसान पहुँचाएगा। लेकिन विभाग को ऐसी कोई जानकारी नहीं है कि वे इस संबंध में दायर दीवानी रिट क्षेत्राधिकार, लेटर्स पेटेंट अपील और विशेष अनुमति याचिका में हस्तक्षेपकर्ता या पक्षकार हैं। इस विलय के अधिकांश लाभार्थी सेवानिवृत्ति के कगार पर हैं, इसलिए बिहार शिक्षा सेवा के अधिकारियों को कोई बड़ा नुकसान होने की संभावना नहीं है।

15. अतः माननीय न्यायालयों के आदेशों के अनुपालन के फलस्वरूप अधीनस्थ शिक्षा सेवा पुरुष एवं महिला संवर्ग के शिक्षकों के 2465 सृजित/स्वीकृत पदों को दिनांक 01.07.77 से बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-2 में उत्क्रमित करने का प्रस्ताव है।

16. वित्त विभाग की सहमति प्राप्त कर ली गई है।

17. प्रस्ताव पर विभागीय मंत्री का अनुमोदन प्राप्त कर लिया गया है।

18. ज्ञापन के कंडिका 15 में निहित प्रस्ताव पर मंत्रिपरिषद का अनुमोदन अपेक्षित है।

(जोर दिया गया)

20. तदनुसार, बिहार के राज्यपाल के आदेशानुसार 7.7.2006 को आवश्यक संकल्प जारी किया गया, जिसमें कहा गया कि अधीनस्थ शिक्षा सेवा (शिक्षण शाखा) के पुरुष एवं महिला संवर्ग के शिक्षकों का वित्त विभाग की अधिसूचना दिनांक 11.4.1977 के अनुसार 1.1.1977 से बिहार शिक्षा सेवा वर्ग II में विलय किया जाता है और आदेश से उत्पन्न होने वाले व्यक्तिगत लाभों का मूल्यांकन करने के बाद उचित आदेश जारी किए जाएँगे। तत्पश्चात, 9.10.2006 को एक अधिसूचना भी जारी की गई, जिसमें उस अधिसूचना में विशेष रूप से उल्लिखित तीन शिक्षकों के संबंध में उपरोक्त संकल्प को प्रभावी बनाया गया।

मुकदमे का तीसरा दौर

21. अब, बिहार शिक्षा सेवा की बारी थी कि वह **दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 10091/2006 के तहत अपनी विनिर्दिष्ट आदेश याचिका** दायर करे, जिसमें उन्होंने बिहार अधीनस्थ शिक्षा सेवा को बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-II में विलय करने संबंधी सरकारी संकल्प दिनांक 7.7.2006 को चुनौती दी थी। तर्क दिया गया था कि बिहार अधीनस्थ शिक्षा सेवा, जिससे माध्यमिक शिक्षक संबंधित थे, बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-II से बिल्कुल अलग थी। ऐसा इसलिए था क्योंकि उनकी भर्ती के तरीके और न्यूनतम योग्यताएँ अलग थीं। यह प्रस्तुत किया गया था कि विलय से उनकी वरिष्ठता प्रभावित होगी और इसलिए यह निर्णय मनमाना है और संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है। राज्य सरकार ने शपथपत्र दायर करके इस याचिका का विरोध किया। राज्य सरकार द्वारा बताया गया कि सरकारी संकल्प दिनांक 7.7.2006, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनुमोदित उच्च न्यायालय के निर्णयों के मद्देनजर जारी किया गया था। महाधिवक्ता की राय भी प्रस्तुत की गई कि दोनों सेवाओं के विलय के संबंध में सरकार के पास 11.4.1977 की अधिसूचना को लागू करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। हस्तक्षेप कर्ता बिहार शिक्षा सेवा संघ ने भी इस याचिका का विरोध किया और बताया कि

शिक्षकों के पक्ष में पहले की विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाओं को उच्च न्यायालय ने यह कहते हुए अनुमति दे दी थी कि सरकारी अधिसूचना में विलय की परिकल्पना की गई थी और उस पर विशेष अनुमति याचिका खारिज कर दी गई थी।

22. हालाँकि, विद्वान एकल न्यायाधीश ने 19.4.2006 के अपने आदेश में इस न्यायालय की टिप्पणी का उल्लेख किया, कि यह उच्च न्यायालय को तय करना था कि क्या राज्य सरकार की अधिसूचना को अधिसूचना द्वारा अपेक्षित तरीके से लागू किया गया है, और इसलिए 11.4.1977 की पिछली अधिसूचना की पुनः जांच करके 7.7.2006 के संकल्प की वैधता की जांच की। उन्होंने यह विचार व्यक्त किया कि अनुसूची 1 के क्रम संख्या 7 में दर्ज समिति की अनुशंसा को स्वीकार करने का सरकार का निर्णय केवल विविध संवर्ग से संबंधित था, और ऐसा करते समय राज्य के लिए बिहार शिक्षा सेवा के बारे में निर्णय लेने और बिहार अधीनस्थ शिक्षा सेवा की पुरुष और महिला शिक्षण शाखा को बिहार शिक्षा सेवा में विलय करने का कोई अवसर नहीं था। इसलिए उन्होंने अपने दिनांक 31.10.2007 के निर्णय और आदेश द्वारा दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 10091/2006 को अनुमति दे दी और दिनांक 7.7.2006 के संकल्प को अभिखंडित कर दिया।

23. उपरोक्त विनिर्दिष्ट आदेश याचिका के साथ, विद्वान एकल न्यायाधीश ने **दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 14678/2006** वाली एक अन्य विनिर्दिष्ट आदेश याचिका पर सुनवाई की, जो 51 अधीनस्थ शिक्षकों द्वारा दायर की गई थी, जिन्होंने दूसरी ओर उसी सरकारी संकल्प दिनांक 7.7.2006 के लाभ का दावा किया था। विद्वान न्यायाधीश ने उस याचिका का निपटारा उसी सामान्य आदेश के साथ किया, लेकिन सरकार को निर्देश दिया कि यदि उनके वाद किसी भी तरह से विविध संवर्ग के समान हैं, तो उन पर विचार किया जाए।

24. यह ध्यान देने योग्य है कि विद्वान एकल न्यायाधीश के दिनांक 31.10.2007 के इस निर्णय और आदेश के बाद, सरकार बिहार सरकार ने 19.11.2007 को एक परिणामी अधिसूचना जारी की, जिसमें उपरोक्त संकल्प संख्या 1209 दिनांक 7.7.2006 (जिसने अधीनस्थ सेवाओं के शिक्षकों को बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-II में विलय कर दिया था) को अभिखंडित कर दिया गया और उससे मिलने वाले वित्तीय लाभों को वापस ले लिया गया।

25. कुछ शिक्षकों ने, जो इस निर्णय और दिनांक 31.10.2007 के आदेश से व्यथित थे, लेटर्स पेटेंट अपील संख्या 941/2007, 946/2007, 947/2007 और 974/2007 दायर किए। जहाँ तक माध्यमिक विद्यालय शिक्षक संघ का संबंध है, उसने 31.10.2007 के आदेश के विरुद्ध सीधे इस न्यायालय में विशेष अनुमति याचिका संख्या 8031/2008 दायर की, लेकिन इस न्यायालय ने अपने दिनांक 16.3.2009 के आदेश में उल्लेख किया कि वे व्यक्तिगत लेटर्स पेटेंट अपील उच्च न्यायालय में लंबित थे, और इसलिए संघ को लेटर्स पेटेंट अपील के माध्यम से उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने की स्वतंत्रता प्रदान की। तदनुसार, याचिकाकर्ता संघ ने लेटर्स पेटेंट अपील संख्या 418/2009 दायर की।

26. अपीलकर्ता संघ साथ ही साथ बिहार शिक्षा सेवा संघ ने खंडपीठ के समक्ष अपनी स्थिति दोहराई। अपीलकर्ता संघ ने मुख्य रूप से यह तर्क दिया कि सर्वोच्च न्यायालय के 19.4.2006 के निर्णय के बाद, विद्वान एकल न्यायाधीश के लिए पूरे विवाद को फिर से खोलना उचित नहीं था, अन्यथा कभी कोई अंतिम निर्णय नहीं हो पाता। हालाँकि, विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय का बचाव बिहार शिक्षा सेवा संघ ने यह तर्क देकर किया कि पिछली कार्यवाही में कोई निश्चित निर्णय नहीं लिया गया था। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, बिहार राज्य ने विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष विलय को मंजूरी देने वाले 7.7.2006 के प्रस्ताव का बचाव किया था। हालाँकि, राज्य ने खंडपीठ के समक्ष अपना रुख बदल दिया। जैसा

कि खंडपीठ के निर्णय के कंडिका 38 से देखा जा सकता है, राज्य सरकार की ओर से यह तर्क दिया गया था। कि न तो वित्त विभाग की दिनांक 11.4.1977 की अधिसूचना में और न ही इस न्यायालय के किसी आदेश में, सिवाय दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 8679/2002 (अवमानना याचिका, जिस पर इन अपीलों के साथ सुनवाई हो रही थी) के, राज्य शिक्षा विभाग के शिक्षकों के बीईएस में विलय के संबंध में दूर-दूर तक कोई निर्णय लिया गया था। तत्पश्चात, इस अनुच्छेद में राज्य सरकार का रुख इस प्रकार दर्ज किया गया है:

"दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 8679/2002 में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के संबंध में, विद्वान महाधिवक्ता द्वारा यह स्पष्टीकरण देने का प्रयास किया गया कि चूंकि उस वाद की सुनवाई सर्वोच्च न्यायालय के दिनांक 19.4.2006 के आदेश के अनुसार इन अपीलों के साथ की जा रही थी, इसलिए इसे बाध्यकारी मिसाल नहीं माना जा सकता।"

27. खंडपीठ ने यह विचार व्यक्त किया कि राज्य सरकार ने अवमानना की धमकी के तहत 7.7.2006 को संकल्प जारी किया था, हालांकि निर्णय में राज्य सरकार की ओर से ऐसा कोई निवेदन दर्ज नहीं है। निर्णय इंगित करता है कि खंडपीठ की राय में इस न्यायालय का दिनांक 19.4.2006 का आदेश विद्वान एकल न्यायाधीश को पूरे विवाद में जाने से नहीं रोकता है। खंडपीठ ने स्वीकार किया कि जब तक नियम नहीं बनाए जाते, तब तक कोई विलय नहीं हो सकता क्योंकि अधीनस्थ शिक्षकों और बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-॥ के कर्मचारियों के वेतन में कोई समानता नहीं है। सरन सिंह समिति के प्रतिवेदन का हवाला देते हुए, खंडपीठ ने यह राय बनाई कि राज्य सरकार की 11.4.1977 की अधिसूचना को विविध संवर्ग में केवल 59 पदों तक ही सीमित रखना होगा।

28. अतः, खंडपीठ द्वारा दिनांक 21.5.2010 के आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा लेटर्स पेटेंट अपील को खारिज कर दिया गया। खंडपीठ ने उसी आदेश द्वारा दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 8679/2002 में लंबित अवमानना मामले को भी खारिज कर दिया। विद्वान एकल न्यायाधीश और खंडपीठ द्वारा पारित आदेशों के परिणामस्वरूप वर्तमान में **दो दीवानी अपीलों (विशेष अनुमति याचिका (सी) संख्या 26675-76/2010 से उत्पन्न)** प्रस्तुत की गई हैं, जो तीसरा अवसर है जब यह विवाद इस न्यायालय के समक्ष आया है।

29. जब इन अपीलों से संबंधित विशेष अनुमति याचिकाएँ विचारार्थ आईं, तो प्रारंभ में 7.3.2011 को एक अधिसूचना जारी किया गया था, और बाद में उत्तरदाताओं के अधिवक्ताओं की सुनवाई के बाद, विद्वान एकल न्यायाधीश और खंडपीठ द्वारा पारित निर्णय और आदेशों के क्रियान्वयन पर 4.7.2011 को पारित एक आदेश द्वारा रोक लगा दी गई। बिहार राज्य ने अब स्थगन आदेश को अपास्त करने के लिए **अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 19-20/2011** प्रस्तुत किया है। दूसरी ओर, अपीलकर्ताओं ने तर्क दिया है कि इस न्यायालय द्वारा दिए गए स्थगन के मद्देनजर, बिहार राज्य और उसके अधिकारियों से अपेक्षा की जाती है कि वे 7.7.2006 के संकल्प को लागू करने के लिए कदम उठाएं, और चूँकि ऐसा नहीं किया जा रहा था, इसलिए उन्होंने बिहार सरकार के मुख्य सचिव और उसके अन्य अधिकारियों के खिलाफ अवमानना याचिका (दीवानी) संख्या 386-387/2011 दायर की है। दीवानी अपील, स्थगन आदेश को अपास्त करने के लिए दायर अंतर्वर्ती आवेदन और अवमानना याचिकाओं पर सुनवाई हो चुकी है और उन पर एक साथ निर्णय लिया जा रहा है। अपीलकर्ताओं की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पटवालिया, बिहार राज्य और उसके अधिकारियों की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री नागेंद्र राय और बिहार शिक्षा सेवा संघ और उसके सदस्यों की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री अखिलेश कुमार पांडे उपस्थित हुए हैं।

प्रतिद्वंदी पक्षों की प्रस्तुति

30. अपीलकर्ताओं की ओर से यह तर्क दिया गया कि विद्वान एकल न्यायाधीश और खंडपीठ के न्यायाधीश, जिन्होंने आक्षेपित आदेश पारित किया है, इस न्यायालय द्वारा 19.4.2006 को पारित आदेश के वास्तविक अर्थ को समझने में विफल रहे हैं। इसके बाद केवल विनिर्दिष्ट आदेश याचिका संख्या 8679/2002 में अवमानना कार्यवाही की निगरानी करना बाकी था। इस सीमित दायरे का अतिक्रमण करके उन्होंने पूरे विवाद को फिर से खोल दिया। यदि इसे मंजूरी दे दी जाती है, तो मुकदमे का कभी अंत नहीं होगा। अपीलकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पटवालिया ने तर्क दिया कि अधीनस्थ शिक्षकों की सेवाओं में अवरोध के तथ्य पर कोई विवाद नहीं किया जा रहा है। तर्क यह दिया जा रहा था कि सरन सिंह समिति की सिफारिश केवल 59 विविध पदों से संबंधित थी और उसे राज्य सरकार द्वारा 11.4.1977 की अधिसूचना में अनुमोदित किया गया था। उनके अनुसार, सिफारिश का यह पाठ सही नहीं था। किसी भी स्थिति में, 11.4.1977 की अधिसूचना को अपने आप में पढ़ा जाना चाहिए। इसके अलावा, वर्तमान वाद में न्यायालय सरकार के दिनांक 7.7.2006 के संकल्प को चुनौती देने से संबंधित है। इस अधिसूचना के क्रियान्वयन से राज्य सरकार पर कोई गंभीर वित्तीय बोझ नहीं पड़ने वाला था। राज्य सरकार को पदों का उन्नयन करना था, और इस प्रकार अधीनस्थ शिक्षकों को बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-II में अपने पद रखने थे, हालांकि इनमें से बहुत से शिक्षकों को लाभ नहीं मिलने वाला था क्योंकि अधिकांश लाभार्थी पहले ही सेवानिवृत्त हो चुके हैं या सेवानिवृत्ति के कगार पर हैं, जैसा कि संकल्प में कहा गया है। जहाँ तक वरिष्ठता का प्रश्न है, उन्होंने तर्क दिया कि जो अधीनस्थ कर्मचारी सेवा में बने रहेंगे उन्हें 1977 से वरिष्ठता मिलेगी, और स्वाभाविक रूप से जो बाद में सेवा में शामिल हुए हैं उन्हें उसके बाद रखा जाएगा। इसलिए श्री पटवालिया ने तर्क दिया कि इन अपीलों को स्वीकार किया जाना चाहिए और दिनांक 7.7.2006 के संकल्प

को चुनौती को अपास्त किया जाना चाहिए। हालाँकि, उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि वह अवमानना की कार्रवाई के लिए दबाव नहीं डाल रहे थे।

31. इसके विपरीत, बिहार शिक्षा सेवा के कर्मचारियों की ओर से यह तर्क दिया गया कि अधीनस्थ शिक्षा सेवा, बिहार शिक्षा सेवा में पदोन्नति के लिए एक फीडर संवर्ग है। उनका वेतन अलग है, और दिनांक 7.7.2006 के संकल्प में प्रस्तावित विलय, उनकी वरिष्ठता को पूर्वव्यापी रूप से प्रभावित करेगा। उनके तर्क में, राज्य सरकार की 11.4.1977 की अधिसूचना को मूलतः सरन सिंह समिति के प्रतिवेदन के आलोक में पढ़ा जाना चाहिए, जिसके अनुसार, उनके अनुसार, अधीनस्थ शिक्षकों के संवर्ग पर सिफारिशें लागू नहीं की गई थीं। इसलिए, उनकी ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अखिलेश कुमार पांडे ने तर्क दिया कि विशेष अनुमति याचिकाओं को खारिज कर दिया जाना चाहिए।

32. बिहार राज्य की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री नागेंद्र राय ने तर्क प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि राज्य सरकार द्वारा 11.4.1977 को पारित अधिसूचना को केवल सरन सिंह समिति के तर्क तक ही सीमित माना जाना चाहिए। सरकारी अधिसूचना में किसी विलय की परिकल्पना नहीं की गई थी और इस न्यायालय के 19.4.2006 के आदेश को केवल उच्च न्यायालय द्वारा अवमानना याचिका की सुनवाई तक ही सीमित नहीं माना जाना चाहिए। उन्होंने तर्क दिया कि अधीनस्थ सेवा के कर्मचारियों को भी अपने सेवा नियमों के तहत पदोन्नति की संभावनाएँ हैं। सरन सिंह समिति का प्रतिवेदन केवल राज्य सेवा के कर्मचारियों के लिए थी और अधीनस्थ सेवा राज्य सेवा का हिस्सा नहीं थी। यह प्रतिवेदन केवल उन लोगों के लिए थी जिनके पास राज्य सेवा में पदोन्नति की गुंजाइश नहीं थी, इसलिए विशेष अनुमति याचिकाओं को खारिज किया जाना चाहिए।

प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार

33. हमने प्रतिद्वंद्वी पक्षों के उत्तरदाताओं द्वारा प्रस्तुतियों पर विचार किया है। तथ्यों और कानूनी प्रस्तुतियों के उपरोक्त विवरण से पता चलता है कि जब अपीलकर्ता द्वारा 1998 की पहली विनिर्दिष्ट आदेश याचिका संख्या 12122 दायर की गई थी, तब राज्य सरकार ने प्रतिवाद दायर करने की भी परवाह नहीं की थी। विद्वान एकल न्यायाधीश ने अभिलेख पर मौजूद आलेख का अवलोकन किया और पाया कि विलय का आदेश अभी तक पारित नहीं हुआ है, और वाद सरकार के समक्ष लंबित है। इसलिए, विद्वान न्यायाधीश ने शिक्षा विभाग के सचिव को 11.4.1977 के सरकारी प्रस्ताव पर कार्रवाई करने का निर्देश देते हुए आदेश पारित किया। बिहार राज्य ने खंड पीठ के समक्ष अपील दायर करने का विकल्प चुना, जहाँ पहली बार उसने कहा कि विलय का कोई प्रस्ताव नहीं था। अपील पर सुनवाई करने वाली खंड पीठ ने गौर किया कि एकल न्यायाधीश का निर्देश सरकार के निर्देशों के अनुसार कार्य करने का था। प्रस्ताव और इसलिए राज्य के लिए व्यथित होने का कोई कारण नहीं था। जब राज्य सरकार ने विशेष अनुमति याचिका दायर की, तो इस न्यायालय ने पाया कि राज्य को दिया गया अंतिम निर्देश था कि वह प्रस्ताव को उसी तरह लागू करे जिस तरह से उसे लागू किया जाना था, और विशेष अनुमति याचिका का निपटारा कर दिया। इस प्रकार, मुकदमे के पहले दौर के अंत में यह स्पष्ट था कि अपीलकर्ता द्वारा दायर याचिका को विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा स्वीकार कर लिया गया था, और उस आदेश को खंडपीठ और इस न्यायालय द्वारा अपीलों में अपरिवर्तित छोड़ दिया गया था।

34. आगे की घटनाओं से स्पष्ट है कि इन आदेशों के बावजूद, राज्य सरकार ने 11.4.1977 की अधिसूचना को लागू करने के लिए कदम नहीं उठाए, जैसा कि मुकदमे के पहले दौर में वैध माना गया था। इस निष्क्रियता के कारण श्री जनार्दन राय और कुछ अन्य शिक्षकों

ने इसके क्रियान्वयन और अधीनस्थ शिक्षकों के बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-II में विलय के लिए एक और विनिर्दिष्ट आदेश याचिका, दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 8679/2002, दायर की। हालाँकि, यह देखा गया है कि इस स्तर पर वित्त विभाग और राज्य सरकार के शिक्षा विभाग के बीच मतभेद था। वित्त विभाग लगातार यह कहता रहा कि अधीनस्थ शिक्षा सेवा का बिहार शिक्षा सेवा वर्ग-II में विलय नहीं किया जा सकता। हालाँकि, इस विनिर्दिष्ट आदेश याचिका में शिक्षा विभाग ने अपने पहले शपथपत्र में दर्ज किया कि 11.4.1977 की अधिसूचना में यह नहीं कहा गया था कि यह केवल 59 पदों के बारे में है। सरकार की फाइलों पर टिप्पणी से स्पष्ट रूप से पता चला है कि शिक्षा विभाग ने यह समझ लिया था कि अधिसूचना के क्रियान्वयन के लिए दोनों संवर्गों का विलय आवश्यक है, और उस उद्देश्य के लिए वित्त विभाग के अनुमोदन के लिए एक मसौदा प्रस्ताव तैयार किया था। इस तथ्यात्मक परिदृश्य के मद्देनजर, और पिछले आदेशों के मद्देनजर, विद्वान एकल न्यायाधीश ने दीवानी रिट क्षेत्राधिकार सं. 8679/2002 की अनुमति दी, और अधीनस्थ शिक्षकों के बिहार शिक्षा सेवा में विलय के लिए कदम उठाने का निर्देश देते हुए आदेश पारित किया। बिहार राज्य की अपील को भी खंड पीठ ने यह कहते हुए खारिज कर दिया कि विवाद पहले ही उच्चतम न्यायालय के आदेशों के साथ अंतिम रूप ले चुका है।

35. इसके बाद, राज्य सरकार द्वारा दायर दीवानी अपील संख्या 4466/2003 दिनांक 19.4.2006 में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश को इसी पृष्ठभूमि में पढ़ा जाना चाहिए। पहले ही कंडिका में इस न्यायालय ने दर्ज किया है कि 1977 में पारित अधिसूचना का इतने लंबे समय तक क्रियान्वयन न होने से उसकी अंतरात्मा को आघात पहुँचा है। दूसरे कंडिका में, न्यायालय ने प्रतिद्वंदी पक्षों के तर्क दर्ज किए हैं। तीसरे कंडिका में, न्यायालय ने विशेष रूप से दर्ज किया है कि उच्च न्यायालय में दायर विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाएँ शिक्षकों के पक्ष में स्वीकार कर ली गई थीं, जिसमें कहा गया था कि संबंधित सरकारी अधिसूचना में इस तरह के विलय

का प्रावधान है। इसके बाद जो कुछ भी दर्ज किया गया है वह अवमानना याचिका से संबंधित है, जो उच्च न्यायालय में लंबित थी और जो उच्च न्यायालय के उस आदेश के क्रियान्वयन न होने से संबंधित थी, जिसमें 11.4.1977 की सरकारी अधिसूचना को लागू करने का निर्देश दिया गया था। जैसा कि इस आदेश के आगे के कंडिका में दर्ज है, केवल यह देखना बाकी था कि क्या अधिसूचना द्वारा अपेक्षित तरीके से क्रियान्वयन किया गया है। यह भी प्रासंगिक है कि राज्य सरकार द्वारा दायर दीवानी अपील को खारिज करने से पहले, न्यायालय ने दर्ज किया कि सरकार भी न्यायालय के समक्ष उत्तरदाताओं (अर्थात् अपीलकर्ता) द्वारा सुझाए गए तरीके से अधिसूचना को लागू करने पर विचार कर रही थी। इसलिए, अंततः न्यायालय ने निर्देश दिया कि उच्च न्यायालय मामले की जाँच करेगा और यदि वह संतुष्ट हो कि अधिसूचना का क्रियान्वयन नहीं किया गया है, तो अवमानना कर्ताओं के साथ कानून के अनुसार व्यवहार करेगा। इसलिए, न्यायालय ने अवमानना कार्यवाही पर लगी रोक तुरंत हटा दी।

36. इस प्रकार, इसके बाद केवल लंबित अवमानना याचिका - विनिर्दिष्ट आदेश याचिका दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 8679/2002 पर निर्णय करना शेष रह गया। बिहार राज्य ने अब तक के निर्णयों को सही ढंग से समझा है, और इसलिए 7.7.2006 का प्रस्ताव पारित किया, जो इस दृष्टिकोण को स्वीकार करता है, जिसे उच्च न्यायालय के साथ-साथ इस न्यायालय ने भी स्वीकार किया है, जिसमें दोनों संवर्गों के विलय और शिक्षकों के उन्नयन की सिफारिश की गई है। प्रस्ताव में यह भी दर्ज किया गया है कि विलय से न तो कोई गंभीर वित्तीय प्रभाव पड़ेगा और न ही यह कई कर्मचारियों की वरिष्ठता को प्रभावित करेगा क्योंकि विलय किए जाने वाले अधिकांश कर्मचारी या तो सेवानिवृत्त हो चुके थे या सेवानिवृत्ति के कगार पर थे।

37. इस पृष्ठभूमि में, जब बिहार शिक्षा सेवा कर्मचारियों ने अपनी विनिर्दिष्ट आदेश याचिका संख्या दीवानी रिट क्षेत्राधिकार 10091/2006 दायर की, तो राज्य सरकार ने अपने दिनांक 7.7.2006 के संकल्प का उचित बचाव किया। हालाँकि, विद्वान एकल न्यायाधीश इस न्यायालय के निर्णय के महत्व को समझने में विफल रहे और उन्होंने सोचा कि उन्हें पहले दो दौर के निर्णयों के बावजूद विवाद को फिर से खोलने की स्वतंत्रता है। इसलिए, उन्होंने उस विनिर्दिष्ट आदेश याचिका को स्वीकार करते हुए आदेश पारित किया। अब हम पाते हैं कि राज्य सरकार ने एक बार फिर अपना रुख बदल दिया और दिनांक 7.7.2006 के संकल्प को अपास्त करने की अधिसूचना जारी कर दी। और जब अपीलकर्ताओं ने अपनी लेटर्स पेटेंट अपील दायर की, तो राज्य सरकार ने अपना बदला हुआ रुख जारी रखा। कम से कम यह तो कहना ही होगा कि राज्य सरकार से इसकी उम्मीद नहीं थी। दुर्भाग्य से, खंडपीठ ने भी विवाद को एक बार फिर से खोलने को मंजूरी दे दी।

38. वर्तमान अपीलों में, हम 7.7.2006 के सरकारी प्रस्ताव की वैधता से चिंतित हैं, जिसका राज्य सरकार ने एकल न्यायाधीश के समक्ष बचाव किया था, लेकिन खंडपीठ के समक्ष अपील में बचाव छोड़ दिया। राज्य सरकार ने यहाँ तक तर्क दिया कि दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 8679/2002 के निर्णय को बाध्यकारी नहीं माना जा सकता, हालाँकि इसकी पुष्टि खंडपीठ और इस न्यायालय द्वारा की जा चुकी थी। दुर्भाग्य से, हमें यह दर्ज करना होगा कि खंडपीठ भी राज्य सरकार और विद्वान एकल न्यायाधीश की ओर से इस विषयांतर में हस्तक्षेप करने में विफल रही। खंडपीठ ने इसे नजरअंदाज कर दिया, यह मानते हुए कि 11.4.1977 की अधिसूचना की व्याख्या करते समय शायद पहले दो दृष्टिकोणों पर विचार किया जा सकता था, इस कार्यवाही के दूसरे दौर के अंत में इस न्यायालय द्वारा पारित 19.4.2006 के आदेश में कोई अस्पष्टता नहीं छोड़ी गई, और राज्य सरकार से इसका पालन और सम्मान करने की अपेक्षा की

गई थी। राज्य सरकार ने तदनुसार कार्य किया, और सरकारी आदेश जारी किया। निर्णयों का सम्मान करने के लिए दिनांक 7.7.2006 के संकल्प को स्वीकार किया। लेकिन 2006 के दीवानी रिट क्षेत्राधिकार 10091 में एकल न्यायाधीश के फैसले के तुरंत बाद, इसे अपास्त करने के लिए दूसरी अति की गई, और अपील में इसका बचाव नहीं किया गया। हमने 7.7.2006 के सरकारी प्रस्ताव की विषयवस्तु पर ध्यान दिया है। हमारे विचार में, यह उचित रूप से तर्कसंगत है और गतिरोध की गंभीरता को कम करने के लिए उचित रूप से जारी किया गया है। चाहे समस्या का समाधान 11.4.1977 की अधिसूचना पर आधारित माना जाए या 7.7.2006 के प्रस्ताव के तहत स्वतंत्र रूप से, इसमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं था।

39. न्यायालयों के पदानुक्रम के अनुसार उच्च न्यायालयों को भी इस न्यायालय के निर्णय और कार्यपालिका द्वारा जारी आदेशों की इसकी व्याख्या को स्वीकार करना आवश्यक है। इससे कोई भी विचलन केवल अनुशासनहीनता और अराजकता को ही जन्म देगा। उच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 141 की अनदेखी नहीं कर सकते, जिसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि इस न्यायालय द्वारा घोषित कानून भारत के क्षेत्र के सभी न्यायालयों पर बाध्यकारी है। जैसा कि इस न्यायालय ने पश्चिम बंगाल राज्य एवं अन्य बनाम शिवानंद पाठक एवं अन्य वाद के कंडिका 28 में 1998 (5) एससीसी 513 में सूचित किया है:-

"यदि किसी निर्णय को उच्च न्यायालय द्वारा अपास्त कर दिया जाता है, तो न्यायिक अनुशासन के अनुसार, जिस न्यायाधीश के निर्णय को अपास्त किया गया है, उसे उस निर्णय के अधीन होना होगा। वह, उसी कार्यवाही में या समान पक्षों के बीच सहपार्श्व कार्यवाही में, अपास्त किए गए निर्णय को पुनः नहीं लिख सकता है....."

इसी प्रकार, हम यह भी कह सकते हैं कि जब किसी न्यायालय के निर्णय की उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की जाती है, तो न्यायिक अनुशासन के अनुसार, न्यायालय को उस निर्णय को स्वीकार करना होगा, और उसे सहपार्श्व कार्यवाही में पुष्टि किए गए निर्णय के विपरीत निर्णय नहीं लिखना चाहिए। हम *फ़जलुनबी बनाम के. खादर वली और एक अन्य* में 1980 (4) एससीसी 125 में सूचित कृष्णा अय्यर, न्यायमूर्ति की टिप्पणियों पर भी ध्यान दे सकते हैं:-

"..... भारत में कोई भी न्यायाधीश, सर्वोच्च न्यायालय की वृहद पीठ को छोड़कर, न्यायिक अनुशासन से विचलित हुए बिना, सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के अनुपात को कम नहीं कर सकता, उसे अस्वीकार नहीं कर सकता या उससे बाध्य नहीं हो सकता।"

40. इसके अलावा, यदि कोई प्रतिद्वंद्वी तर्कों के गुण-दोषों पर भी गौर करे, तो इसमें कोई विवाद नहीं है कि यद्यपि नियम अधीनस्थ शिक्षकों के लिए पदोन्नति का एक माध्यम प्रदान करते हैं, वास्तव में उनके लिए पदोन्नति की संभावनाएँ बहुत कम हैं। जहाँ तक अधीनस्थ शिक्षकों का संबंध है, एक गंभीर गतिरोध है। सरन सिंह समिति का गठन मूलतः इसी मुद्दे पर विचार करने के लिए किया गया था। जैसा कि समिति के प्रतिवेदन से देखा जा सकता है, राज्य के विभिन्न सेवा संघ बिहार अभियंत्रण सेवा के समान पदोन्नति के लिए उचित प्रावधान की मांग कर रहे थे। यह सच है कि समिति के प्रतिवेदन में समस्या की जाँच करते समय विविध संवर्ग के 59 पदों का उल्लेख है। हालाँकि, कंडिका 11.10 के उप-खंड (1) और (2) में शिक्षा विभाग के अभियंताओं को लोक निर्माण विभाग में और चिकित्सकों को स्वास्थ्य सेवाओं में स्थानांतरित करने का निर्देश देने के बाद, समिति ने उप-खंड (3) में सिफारिश की कि "शेष पदों को सामान्य संवर्ग में शामिल किया जाना चाहिए और जहाँ तक संभव हो, बिहार शिक्षा सेवा के अधिकारियों द्वारा नियुक्त किया जाना चाहिए"। राज्य सरकार द्वारा 11.4.1977 को जारी

अधिसूचना में समिति की सिफारिश को मंजूरी दे दी गई, लेकिन सिफारिश को मंजूरी देते समय प्रयुक्त शब्द थोड़े अलग हैं।

41. इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि राज्य सरकार को इस सिफारिश पर उचित निर्णय लेना था। समिति द्वारा की गई सिफारिशों को निश्चित रूप से सरकार के समक्ष प्रस्तुत आलेख के रूप में देखा जाना चाहिए। हालाँकि, अंततः सरकार का निर्णय ही प्रासंगिक है और इसलिए राज्य सरकार की अधिसूचना में प्रयुक्त शब्दों पर ध्यान देना होगा। यहाँ राज्य सरकार द्वारा प्रयुक्त शब्दों में अनुमोदित सिफारिश इस प्रकार है:-

"शिक्षक (नेतरहाट के शिक्षकों को छोड़कर) और स्टेडियम प्रबंधक आदि जैसे विभिन्न पदों को बिहार शिक्षा सेवा संवर्ग में शामिल किया जाना चाहिए और संवर्ग के अधिकारियों को इन पदों पर नियुक्त किया जाना चाहिए।"

(जोर दिया गया)

शिक्षा विभाग ने इस अधिसूचना को स्पष्ट रूप से समझा। इससे पहले, उसने वित्त विभाग के अनुमोदन के लिए दोनों संवर्गों के विलय की सिफारिश करते हुए एक मसौदा प्रस्ताव तैयार किया था। और बाद में, राज्य सरकार ने भी मुकदमे के दूसरे दौर के अंत में इस न्यायालय के निर्णय के बाद, 7.7.2006 को (वित्त विभाग की सहमति से) एक प्रस्ताव पारित किया था।

42. बिहार शिक्षा सेवा संघ ने अधीनस्थ सेवा कर्मचारियों के राज्य सेवा वर्ग-॥ में विलय का विरोध करने के लिए समान सेवा नियमों के अभाव पर बहुत जोर दिया था। इस संदर्भ में, हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि संवर्ग के विलय का निर्णय एक नीतिगत मामला है जैसा कि इस न्यायालय ने एस.पी. शिवप्रसाद पीपल बनाम भारत संघ एवं अन्य, 1998 (4) एससीसी 598 में सूचित किया था। यह राज्य को तय करना है कि किन संवर्गों का विलय किया जाना

चाहिए, बशर्ते कि निर्णय मनमाना या अनुचित न हो। जैसा कि पहले कहा गया है, 7.7.2006 का संकल्प तर्कसंगत और न्यायोचित है, और इसे अनुच्छेद 14 के अंतर्गत मनमाना या अनुचित नहीं कहा जा सकता। इसे संधारित रखा जाना चाहिए। यह संभव है कि विलय कुछ कर्मचारियों की संभावनाओं को प्रभावित कर सकता है, लेकिन यह विलय को खारिज करने का कारण नहीं हो सकता। एक बार राज्य सरकार किसी वाद में दोनों संवर्गों के विलय का आवश्यक निर्णय ले लिया है, तो राज्य सरकार से अपेक्षित है कि वह आवश्यक नियम बनाकर उसका पालन करे।

43. बिहार शिक्षा सेवा के कर्मचारियों द्वारा उठाई गई तर्कों में से एक यह थी कि अधीनस्थ शिक्षक राज्य सेवा से संबंधित नहीं हैं। इस स्तर पर हम ध्यान दें कि दीवानी अपीलों की तिथियों और घटनाओं की अपनी सूची में, अपीलकर्ताओं ने विशेष रूप से इस तथ्य का उल्लेख किया है कि ये अधीनस्थ सेवाएँ बिहार सेवा संहिता के परिशिष्ट-16 में शामिल हैं, और इसलिए, यह तर्क दिया जाता है कि यह कहना गलत होगा कि अधीनस्थ सेवा राज्य सेवा का हिस्सा नहीं है। यदि हम संहिता का संदर्भ लें तो हम पाते हैं कि अधीनस्थ सेवा में वर्ग-I और वर्ग-II राज्य सेवा के रूप में वर्गीकृत पदों के अलावा सभी पदों का उल्लेख बिहार सेवा संहिता, 1952 के परिशिष्ट-16 की मद 119 में किया गया है। इस प्रकार, इस आपत्ति में भी कोई योग्यता नहीं है।

44. इस पूरी चर्चा से हम केवल एक ही निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि विद्वान एकल न्यायाधीश, जिन्होंने याचिका दीवानी रिट क्षेत्राधिकार सं.10091/2006, जिसने बिहार शिक्षा सेवा संघ की ओर से दायर मुकदमे के तीसरे दौर की शुरुआत की थी, की सुनवाई की, को पूरे विवाद को फिर से खोलने का कोई अधिकार नहीं था, चाहे वह अन्यथा भी क्यों न हो। राज्य सरकार ने इस न्यायालय के 19.4.2006 के आदेश के बाद पहले ही 7.7.2006 का एक प्रस्ताव पारित कर दिया था। उस प्रस्ताव की वैधता की जाँच करते समय (जिसका बचाव राज्य सरकार ने इस

स्तर पर विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष किया था) पूरे विवाद पर एक बार फिर से विचार किया गया। निर्णयों की अंतिमता का नियम, जो कि पुनर्न्यायिकता के सिद्धांत या उसके समरूप सिद्धांतों में निहित है, ऐसी किसी भी पुनर्परीक्षण की अनुमति नहीं देता है, और विद्वान न्यायाधीश स्पष्ट रूप से इसे पहचानने में विफल रहे।

45. उपर्युक्त कारणों से, ये अपीलें (विशेष अनुमति याचिका संख्या 26675-76/2010 से उत्पन्न) स्वीकार की जाती हैं। पटना उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा लेटर्स पेटेंट अपील संख्या 418/2009 और अन्य लेटर्स पेटेंट अपील में दिनांक 21.5.2010 को पारित निर्णय और आदेश, और विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 1009112006 में दिनांक 31.10.2007 को पारित निर्णय और आदेश को अपास्त किया जाता है और उक्त विनिर्दिष्ट आदेश याचिका को खारिज किया जाता है। परिणामस्वरूप, एकल न्यायाधीश के निर्णय के अनुसरण में जारी दिनांक 19.11.2007 की अधिसूचना भी अभिखंडित और अपास्त मानी जाएगी। राज्य सरकार का दिनांक 7.7.2006 का संकल्प संधारित रखा जाता है। राज्य तदनुसार कार्रवाई करेगा। आई.ए. संख्या 19-20/2011 अपास्त की जाती है। जैसा कि अपीलकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पटवालिया ने कहा, अपीलकर्ता अब दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 8679/2002 से उत्पन्न अवमानना की कार्रवाई के लिए दबाव नहीं डाल रहे हैं। अवमानना याचिका संख्या 386-387/2011 भी, तदनुसार, दबाव न डाले जाने के कारण, निस्तारित मानी जाएगी।

46. इस मामले में राज्य सरकार के रवैये से बड़ी संख्या में शिक्षकों में अनावश्यक चिंता पैदा हो गई है। राज्य सरकार को यह समझना होगा कि जिस देश में इतनी निरक्षरता है और जहाँ बड़ी संख्या में पहली पीढ़ी के छात्र हैं, वहाँ प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षकों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। उनके साथ सम्मानजनक व्यवहार किया जाना चाहिए और उन्हें उचित वेतन

और पदोन्नति के अवसर दिए जाने चाहिए। राज्य सरकार से यह अपेक्षा बिल्कुल नहीं की जाती कि वह उन्हें वर्षों तक मुकदमे में न्यायालय में घसीटे।

47. यद्यपि अपीलों का निपटारा उपरोक्तानुसार किया जा चुका है, फिर भी हम बिहार राज्य द्वारा समय-समय पर अपना रुख बदलने के तरीके पर अपनी कड़ी नाराजगी व्यक्त करते हैं। राज्य सरकार से इसकी अपेक्षा नहीं की जाती है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने विनिर्दिष्ट आदेश याचिका संख्या 1009/2006 के माध्यम से पूरे विवाद को फिर से खोलने के लिए जिस तरह से कार्यवाही की, और लेटर्स पेटेंट अपील संख्या 418/2006 में खंडपीठ ने भी उस दृष्टिकोण को मंजूरी दी, वह भी संतोषजनक नहीं है। यदि इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश राज्य सरकार या किसी भी पक्ष को स्पष्ट नहीं थे, तो वह निश्चित रूप से स्पष्टीकरण के लिए इस न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकता था। लेकिन वह एक संपार्श्विक कार्यवाही में विपरीत तर्क नहीं दे सकता था। हम राज्य सरकार से, और विशेष रूप से उच्च न्यायालय से, इस तरह के दृष्टिकोण की अपेक्षा नहीं करते हैं। यह कहने के बाद, यद्यपि हमने राज्य सरकार के दृष्टिकोण पर अपनी नाराजगी व्यक्त की है, हम लागत के संबंध में कोई आदेश पारित करने से बचते हैं।

आर.पी.

अपीलें निष्पादित की गईं।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।